चतुर्थ अध्याय

प्रो॰ 'मागध' कृत असमिया आलोचना के प्रेरक तत्व तथा उनका आलोचक व्यक्तित्व

भूमिका:

प्रो॰ 'मागध' के असमिया आलोचनात्मक रचना लिखने के पीछे कई कारण निहित थे । जब वे बिहार से असम आए और गौहाटी विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के अध्यापक का कार्यभार संभाला तब के बाद से कई प्रसंग ऐसे उत्पन्न हुए जिन कारणों से उन्हें असमिया आलोचनात्मक लेख तथा ग्रंथ लिखने की प्रेरणा मिली । प्रस्तुत शोध प्रबंध पर इन्हीं तत्वों पर विचार किया गया है । साथ ही 'मागध' जी के आलोचक व्यक्तित्व पर भी प्रकाश डाला गया है । उनकी आलोचना पद्धति एवं उनके प्रखर गवेषक आलोचक दृष्टि पर विस्तार से विचार किया गया है ।

4.1 डॉ॰ 'मागध' कृत असमिया आलोचना के कारक तत्व:-

पिछले अध्याय में डॉ॰ 'मागध' कालीन असमिया आलोचना और आलोचक पर विचार करने के पश्चात प्रस्तुत अध्याय में विचारणीय है कि वे कौन से कारण रहें हैं जिन्होंने 'मागध' जी को असमिया साहित्य और समाज पर लिखने के लिए प्रेरणा दी । प्रस्तुत अध्याय में इसीलिए पहले उन कारकों पर विचार किया जाएगा जिनसे वे असमिया आलोचनात्मक लेख लिखने के लिए प्रेरित हुए । तदुपरान्त 'मागध' जी के आलोचक व्यक्तित्व पर विवेचन किया जाएगा ।

विद्यालय में पढ़ते समय ग्रीष्मावकाश में वे अपने दालन से लड़कों के साथ बाहर निकल भागते और बाहर ताड़' के वृक्षों से फल (फेदा) काटकर खाते । इसे रोकने के लिए डॉ॰ 'मागध' के पितामह ने एक उपाय खोजा । वे एवं अन्य व्यक्ति दोपहर को दालन में आराम करते और उन्हें हिंदी महाभारत और सुखसागर, प्रेमसागर को ज़ोर-ज़ोर से पढ़ने के लिए कहते, जिसे सभी लोग सुन सकें । यह कार्यक्रम प्राय: रोज चलता । इससे 'मागध' जी को दो लाभ मिला । एक उनका वेबजह बाहर घूमना बंद हुआ और उनका झुकाव भक्ति काव्य की ओर होता गया । डॉ॰ 'मागध'

जब पहली बार हॉस्टल में रहने के लिए जा रहे थे तब उनके पितामह ने उन्हें 'श्री मदभगवत गीता' का श्री रघुनंदन शुक्ल कृत हिंदी अनुवाद की प्रति देते हुए कहा था कि यदि किसी कठिनाई का अनुभव हो तो तुम इसका पाठ करना । हॉस्टल में रहते समय डॉ॰ 'मागध' वैसा करते । जिस विद्यालय में वे पढ़ते थे वहाँ गीता प्रेस, गोरखपुर की 'गीता' और 'रामायण' के परीक्षा केंद्र थे । डॉ॰ 'मागध' ने अपने गुरुजनों के आदेश से उन परीक्षाओं में भाग लिया और अंतत: 'गीता' की एक और रामायण की दोनों परीक्षाएँ पास कर ली । इन परीक्षाओं ने भी उन्हें भक्ति काव्य पढ़ने के लिए प्रेरित किया ।

असम आने के पूर्व 'मागध' जी गोपालगंज डीग्री कॉलेज में हिंदी के व्याख्याता थे । वहाँ उनकी चार किताबें प्रकाशित हो चुकी थीं, जिनमें दो का संबंध अलंकार शास्त्र से था और एक का काव्य शास्त्र से । चौथी पुस्तक हिंदी साहित्य इतिहास विषयक थी । इन पुस्तकों की समीक्षा तो प्रकाशित हुई ही थी, उनमें 'अलंकार विमर्श' के संबंध में आचार्य नगेंद्र ने स्पष्ट मत व्यक्त किया था कि – "प्रस्तुत पुस्तक अपने अधिकारी विद्वान की प्रामाणिक रचना है ।"[१]

सन 1970 के अक्टूवर मास की 31 तारीख को 'मागध' जी ने गौहाटी विश्वविद्यालय में हिंदी व्याख्याता के रूप में कार्यभार ग्रहण किया । इस प्रकार स्नातकोत्तर हिंदी विभाग गौहाटी विश्वविद्यालय में शुरू हुआ । असम आने के पूर्व वे असमिया भाषा और साहित्य से पूरी तरह अपरिचित थे । असम में आने के पश्चात वे फाँसी बाज़ार (फ़ैन्सी बाज़ार) में रहने लगे । वहाँ का वातावरण पूरी तरह से हिंदी प्रदेश का होने के कारण असमिया सुनने को भी नहीं मिलती थी । किन्तु राष्ट्रीय एकता, भावात्मकता आदि की दृष्टि से असमिया नहीं जानने के कारण 'मागध' जी का मन कचोटता था । भारतीय संविधान में भी ऐसा संकेत है कि जो व्यक्ति जिस प्रदेश में रहता है उसे वहाँ की भाषा, रीति-रिवाज आदि से परिचित होना आवश्यक है । परिचय के अभाव में उसे पदे-पदे कठिनाई झेलनी पड़ेगी । डॉ॰ 'मागध' को इसका प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा था । इस कारण बोल-चाल के लिए भाषा सीखना आवश्यक था, किन्तु असमिया भाषा के वर्णों और शब्दों

का उच्चारण हिंदी से इतना अधिक भिन्न है कि लिखित और उच्चरित रूप में हिंदी जैसी एकरूपता नहीं है । उदाहरणार्थ लिखित रूप 'चीटी बस' का उच्चरित रूप 'सीटी बस' लिया जा सकता है ।[२] इसलिए भाषा सीखने की प्रबल प्रेरणा यह बनी ।

जनवरी 1971 ई॰ में किसी दिन घूमते हुए 'मागध' जी डॉ॰ जे. बी. त्रिपाठी (अंग्रेजी के प्रोफ़ेसर, संदिकै गर्ल्स कॉलेज) के निवास पर गये । वहीं उनकी भेंट केंद्रीय विद्यालय, गुवाहाटी के एक शिक्षक लाल साहब (स्व॰ भूपेन्द्र लाल) से हुई । विभिन्न प्रकार की बातों के क्रम में लाल साहब ने कहाँ कि यहाँ हिंदी शिक्षकों के प्रति अच्छा भाव नहीं है । कारण पूछने पर उन्होंने जो कहा उसका सार तत्व यह था कि हिंदी क्षेत्र से आनेवाले लोग विशेषतः हिंदी प्रचारक असम के लोगों को हिंदी पढ़ने-लिखने-सीखने आदि पर बहुत बल देते है, लेकिन वे स्वयं असमिया नहीं सीखते । असम के अनेक रीति-रिवाजों, पहनावों आदि का वे उपहास करते हैं । इस कारण उनके प्रति सम्मान का भाव नहीं रह पता और पीठ पीछे उनकी निंदा की जाती है । कहने का तात्पर्य यह है कि असम में रहनेवाले गैर असमिया भाषियों को न केवल वहाँ की मातृभाषा सीखनी चाहिए बल्कि हर प्रकार के रीति-रिवाजों का सम्मान करना चाहिए । इससे न केवल उस व्यक्ति विशेष को असमिया समाज में सम्मान मिलेगा, बल्कि हिंदी के प्रचार-प्रसार में भी सुविधा होगी । यह बात 'मागध' जी की अपनी पूर्व दृष्टि का ही पोषण करती थी । इससे उनके मन में असमिया भाषा सीखने और उसे पढ़ने-लिखने के प्रति मन में भाव और भी बढ़ा । 'मागध' जी ने लाल साहब से स्पष्ट शब्दों में कहा कि 'मैं उनके इस विचार को उलट दूँगा । मैं असमिया सीखूँगा और असमिया साहित्य और समाज के प्रति अपने विचार को पुस्तकाकार रूप में परिणत करूँगा । वहाँ से लौटने पर यह विचार मन में बार-बार घूमता रहा.।'

तभी एक अनुकूल घटना घटी । वे एक-दो दिन बाद ही असमिया विभाग में अन्य अध्यापकों के साथ बैठ कर बात-चीत कर रहे थे । 'मागध' जी अपनी बात या तो हिंदी में कहते या अंग्रेजी में । इसी प्रकार घंटों बातें होती रहती तभी प्रो॰ महेश्वर नेओग (जवाहरलाल नेहरू पीठासीन अध्यापक और असमिया विभागाध्यक्ष) ने 'मागध' जी से कहा कि 'आपको यहाँ रहते

हुए दो-ढाई महीने हो चुके है, फिर भी असमिया नहीं सीखी।' 'मागध' जी ने कहा कि 'नहीं, नहीं सीखी है ।' इसका कारण बताते हुए उन्होंने डॉ॰ नेओग से कहा कि यह विश्वविद्यालय सन 1948 ई॰ से है । यहाँ के कर्मचारी, अध्यापक एवं अन्य सहित सौ से अधिक लोग गैर असमिया भाषी हैं, उन सबको असमिया सीखाने के लिए इस विश्वविद्यालय ने क्या किया ? यह काम असमिया विभाग का होना चाहिए था कि गैर असमिया भाषी कर्मचारियों को असमिया सीखाने के लिए प्रयत्न करे । इस बात का वहाँ उपस्थित अधिकांश शिक्षकों ने समर्थन किया । डॉ॰ नेओग को यह बात लगी और उन्होंने उसके बाद निश्चयात्मक स्वर में कहा कि 'मैं अगले सप्ताह से एक घंटा असमिया सिखाने के लिए क्लास लूँगा' । इसका समय संध्या 4 बजे से 5 बजे होगा और यह सूचना पूरे विश्वविद्यालय में फैला दी गयी । इस प्रकार असमिया विभाग की ओर से प्रो॰ नेओग ने गैर असमिया भाषियों को असमिया सिखाने का क्लास शुरू किया । क्लास शुरू होने पर पहले दिन तो उपस्थिति कम थी लेकिन बाद में उपस्थिति बढ़ती गयी और पचासों की संख्या में लोग आकर कक्षा में बैठने लगे । इस आयोजन का श्रेय डॉ॰ 'मागध' को देते हुए डॉ॰ नेओग ने इनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और कहा कि यह विचार डॉ॰ 'मागध' के उर्वर मस्तिष्क की उपज है । डॉ॰ नेओग के इस आयोजन से डॉ॰ 'मागध' में ऐसा विश्वास जागा कि वे शीघ्र ही असमिया भाषा सीखकर असमिया भाषा पर कार्य करने में निष्णात हो गए । डॉ॰ नेओग का यह वर्ग लगभग दो माह तक चला । शिक्षक का पहला कर्तव्य होता है – छात्र को पाठ सामग्री उपलब्ध कराना । इस निमित्त वह स्वयं लिखता भी है । गोपालगंज डिग्री कॉलेज में रहते हुए डॉ॰ 'मागध' जी ने पहली किताब पद्माकर कृत 'पद्माभरण' का सम्पादन और उसकी टीका के साथ विस्तृत भूमिका इसी कारण लिखी थी । गुवाहाटी में रहते समय 'असम राष्ट्र भाषा प्रचार समिति' के आग्रह पर उन्होंने हिंदी साहित्य का इतिहास एवं कई और छोटी पुस्तके भी इसी आदर्श के अनुरूप तैयार कि थी जिनमें 'आठ एकांकी'..... आदि हैं । असमिया के लिए 'मागध' जी को आरंभ में वैसा क्षेत्र नहीं मिला पर बाद में उन्होंने 'संदेशरासक' का असमिया अक्षरों में लेखन, उसकी संस्कृत

अवचूरिका, असमिया अनुवाद के साथ उसकी विस्तृत भूमिका लिखकर एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति की । यह छात्रों के अवश्यकता के अनुरूप ही काम है ।

मई 1971 ई॰ के आस-पास श्री बापचन्द्र महंत जी ने डॉ॰ 'मागध' जी से संपर्क किया और घंटों बात-चीत के बाद महंत जी ने बताया कि 'पुणे के 'राष्ट्रवाणी' ने महापुरुष शंकरदेव विशेषांक प्रकाशित करने का निश्चय किया है और उसका अतिथि संपादक महंत जी को बनाया गया है । अत: आपसे आग्रह है कि महापुरुष शंकरदेव से संबन्धित कोई एक लेख अवश्य दें ।' डॉ॰ 'मागध' ने अपनी लाचारी प्रकट की । बहुत समझाने-बुझाने के बाद भी इस बात पर अड़े रहे कि 'मागध' जी से वे लेख अवश्य लेंगे । बात-चीत के क्रम में ही उनकी आत्मीयता से डॉ॰ 'मागध' जी बड़े प्रभावित हुए और वादा किया कि कुछ न कुछ अवश्य लिख देंगे, उसके पश्चात वे आश्वस्त होकर चले गये । बाद में वे जब कभी गुवाहाटी आते तो डॉ॰ 'मागध' के निवास स्थान पर ही टिकते और घंटों साहित्य चर्चा करते । वे स्वयं असमिया वैष्णव भक्ति साहित्य के प्रामाणिक आलोचक थे । हिंदी अध्यापक होने के कारण उनकी सूरदास पर भी गहरी पकड़ थी । साहित्य चर्चा के क्रम में ही उन्होंने डॉ॰ 'मागध' को शंकरदेव और सूरदास पर एक छोटी किन्तु तुलनात्मक किताब लिखने की राय दी । इस संबंध में उनका बार-बार आग्रह रहा जिसकी परिणति आगे डॉ॰ 'मागध' की डी॰ लिट थीसिस के रूप में हुई ।

गौहटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी के छात्र संघ ने उन्हीं दिनों के आसपास डॉ॰ 'मागध' से आग्रह किया कि आप एक व्याख्यान दे । डॉ॰ 'मागध' ने बताया कि वे असमिया में व्याख्यान नहीं दे सकते और अंग्रेजी में भी कठिनाई होगी । यदि हिंदी में सुनना चाहें तो किसी भी समय व्याख्यान के लिए तैयार है । छात्र संघ के अध्यक्ष और सचिव दोनों ने इस पर सहमति व्यक्त की और व्याख्यान के लिए तिथि और समय निश्चित कर दिया गया । व्याख्यान बी. बरुआ हाल के पूर्वी छोर के उपरी तल पर हुआ जहाँ हिंदी विभाग का कक्ष था । वहाँ हॉस्टल में रहने वाले छात्रों के अतिरिक्त कई विद्वान प्रोफेसर भी उपस्थित थे । चूँकि व्याख्यान का विषय डॉ॰ 'मागध' पर

छोड़ दिया गया था इसलिए उन्होंने व्याख्यान मूलतः 'मैं और हम' (व्यष्टि और समष्टि) पर दिया । व्याख्यान सुनकर उपस्थित लोग प्रभावित लगे । प्रोफेसरों में डॉ॰ सत्येंद्र नाथ शर्मा और अंग्रेजी विभागाध्यक्ष काफ़ी प्रभावित दिखे । छात्रों में से एक विज्ञान का विद्यार्थी (भूपेंद्र नाथ राय चौधुरी) व्याख्यान समाप्त होने पर डॉ॰ 'मागध' से मिला और बोला, 'सर, मैं हिंदी पढ़ना चाहूँगा' । वह छात्र दो-चार दिन के अंतराल पर डॉ॰ 'मागध' के निवास पर आता और घंटों हिंदी से संबन्धित बातें करता । डॉ॰ 'मागध' उसी को साथ लेकर पान बाज़ार गए और 'लायर्स बूक स्टॉल' से असमिया प्राइमर और 'श्री शंकरदेव वाक्यामृत' की प्रतियाँ खरीदी । दुकानदार ने भी आश्चर्य प्रकाशित करते हुए कहा कि दोनों का एक साथ पढ़ना क्या संभव हो सकेगा ? वही छात्र डॉ॰ भूपेंद्र नाथ रायचौधुरी है जो गौहाटी विश्वविद्यालय में प्रोफेसर रह चूंके है ।

श्री बापचन्द्र महंत को डॉ॰ 'मागध' ने लेख लिखकर देने का वादा किया था, पर उस समय तक वे असमिया में लिख नहीं सकते थे । असमिया में उपलब्ध सामग्री को धड़ल्ले से पढ़ते अवश्य थे । उन्होंने शंकरदेव विषयक अंग्रेजी में लिखित ग्रंथों और कुछ असमिया ग्रंथों का अध्ययन किया । अध्यायनोपरांत उन्होंने महसूस किया कि शंकरदेव के साहित्य का मूल्यांकन ठीक से नहीं हुआ है । कारण यह है कि कुछ लोगों ने उन्हें असमिया का सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार घोषित किया और दूसरे कुछ लोगों ने उन्हें केवल धर्म प्रचारक तक सीमित रखा । कुछ दूसरे लोग पुराण कथाओं का अनुवादक भर समझे । यह सब सोचने के बाद डॉ॰ 'मागध' ने 'शंकरदेव की मूल्यांकन की समस्या' शीर्षक से एक विस्तृत लेख लिखा जो पुणे की 'राष्ट्रवाणी' के महापुरुष शंकरदेव विशेषांक में अक्टूबर, 1971 ई॰ में छपा । वह लेख महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ लेकिन खेद यह रहा कि असमिया विद्वानों के बीच वह लेख प्रचारित नहीं हुआ । दुसरे वर्ष, 1972 के 'नीलाचल' नामक पत्रिका के शारदीय अंक में उस लेख को श्री बापचन्द्र महंत ने स्वयं असमिया में अनुवाद कर 'शंकरदेवर मूल्यानर समस्या' शीर्षक से छपवाया जिसका दूरगामी प्रभाव हुआ । जिस किसी विद्वान ने उसे पढ़ा वह डॉ॰ 'मागध' के नाम से परिचित तो हुआ ही साथ ही वह शंकरदेव के साहित्य पर पुनर्विचार करने पर विवश हुआ । जिन लोगों ने शंकरदेव के महत्त्व को कम आँका

था उनमें भी सुधारने की प्रक्रिया शुरू हुई । डॉ॰ 'मागध' ने अपने लेख में निष्कर्ष रूप में जो कहा था उसकी कतिपय पंक्तियाँ उद्धृत करना अपेक्षित था –"वस्तुत: शंकरदेव का काव्य सच्चिदानंदी चेतना से ओतप्रोत है । जिसकी स्थिति एकशरणीय अथवा अतिमानसी है । वह लीलात्मक है, मायात्मक नहीं उनकी साधना रागोन्मुख है, विरागोन्मुख नहीं । उनका प्रत्येक सोपान अपने में पूर्ण है ; सम्पूर्ण काव्य लोकजीवन से ..... होकर चलता है । उनकी कविता-साधना में न 'नामधर्म' की स्वतंत्र स्थिति है, विलासकला अथवा काव्य-चमत्कार भर ही उसका लक्ष्य है ; न एकांत संयोगी अनुभूत, न लीला के प्रति तटस्थ भावना । बल्कि उनकी समस्त साधना तादृपी, अखंड और अव्याहृत है । समस्त उपलब्धियों का ढाँचा भारतीय होकर भी उनका काव्य पुराण नहीं; अंतत: काव्य है; वैसे ही काव्य होकर भी हरि स्मरण अथवा 'नामधर्म' है । काव्य की अनेक भूमिकाओं को आत्मसात करने पर भी वह काव्यमात्र नहीं है । उसका श्रेष्ठत्व काव्य के श्रेष्ठत्व से महार्ध है और प्रकृत्या भिन्न, एक शरणीय नाम धर्म का मंत्र-द्रव्य होकर भी सांप्रदायिक सिद्धान्त प्रतिपादन नहीं, एकमेव सच्चिदानंदी चेतना से ओतप्रोत होकर भी पुराण-शिरोमणि नहीं, तभी विगत पाँच शताब्दियों से असमिया समाज के लिए वे 'तमसो माँ ज्योतिर्गमय' का मूर्तित रूप बना है । काव्य-प्रतिभा और भक्ति साधना का उदात्त और श्रेष्ठ रूप ही शंकरदेव के साहित्य में उपलब्ध है । वह काव्य, संगीत और साधना की त्रिवेणी है । डॉ॰ नेओग, डॉ॰ शर्मा, डॉ॰ वी. के. बरुआ, डॉ. गोस्वामी, डॉ. मूर्ति, श्री के. आर. मेधी, श्री बापचन्द्र महंत जैसे अनेक विद्वान-विचारकों ने जो मार्ग दिखाया है, उस पर अभी काम होना बाकी है । इन्हीं विद्वानों के विचारों को आधार भूमि के रूप में स्वीकार करते हुए नई पीढ़ी शंकरदेव के सहीं मूल्यांकन की ओर अग्रसर होगी ऐसा मेरा विश्वास है ।"[3]

इस एक लेख ने ही जहाँ डॉ॰ 'मागध' को असमिया विद्वानों के मध्य स्थान दिलाया वहीं स्वयं 'मागध' के लिए भी अब कोई रास्ता नहीं बचा था । डॉ॰ 'मागध' को असमिया आलोचना में अपनी राह बनानी थी, पुनः श्री बापचंद्र महंत का आग्रह भी था, इसलिए 1971 ई॰ की दुर्गापूजा की छुट्टी में जब वे बिहार गए तो बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर में जाकर डी. लिट. उपाधि के

लिए "सूरदास और शंकरदेव के कृष्ण भक्ति काव्यों का तुलनात्मक अध्ययन" शीर्षक से अपना रजिस्ट्रेशन कराया और एक वर्ष की कड़ी मेहनत के पश्चात उक्त विषय पर डी. लिट. शोध प्रबंध लिखकर विश्वविद्यालय में परीक्षार्थ जमा करवाया, जिसपर अगस्त 1973 ई. में डी. लिट. की उपाधि मिली । 'मागध' जी ने अपने असमिया आलोचक बनने के तीन कारण स्वीकार किए हैं । पहला, उनका मानना है कि असमिया भाषा साहित्य में अभी भी अनेक गवेषणा के क्षेत्र पड़े है । ऐसे अनेक विषय है जिन्हें असमिया विद्वानों ने छुआ तक नहीं है । इसलिए वे इस क्षेत्र में कार्य करना चाहते है । दूसरा, असमिया भाषा साहित्य का प्रचार हिंदी क्षेत्र में बहुत कम है, इसका यथोचित प्रचार होना आवश्यक है । हिंदी भाषा के माध्यम से असमिया साहित्य का प्रचार होने पर सम्पूर्ण भारतवर्ष असमिया साहित्य के बारे जान पायेंगे । तीसरा, हिंदी राजभाषा के रूप में स्वीकृत है । हिंदी लेखकों का कर्तव्य बनता है कि वे विश्व के ज्ञान-विज्ञान की बातों को हिंदी के माध्यम से प्रस्तुत करे । हिंदी साहित्य के वाङ्मय को समृद्ध करना हिंदी साहित्यकारों का कर्तव्य बनता है । इस प्रकार भिन्न कारणों से 'मागध' जी असमिया साहित्य के आलोचक बन सके । बाद में उनका लेखन ही पूरी तरह असमिया साहित्य, मूलत: भक्ति साहित्य पर केन्द्रित हुआ । इस संबंध में कई किताबें और लेख सामने आयी, जिनकी चर्चा यथा आवश्यक यहाँ की गयी है ।

ऊपर जीतने भी तथ्य दिए गए हैं वे सभी डॉ॰ 'मागध' के असमिया सीखने, बोलने, पढ़ने-लिखने आदि के प्रबल कारक तत्व के रूप में स्पष्ट हैं ।

4.2 'मागध' जी का आलोचक व्यक्तित्व:

असमिया साहित्य-संस्कृति विषयक आलोचनात्मक ग्रंथ को लेकर ही प्रस्तुत शोध प्रबंध प्रस्तुत किया गया है तथा इनके माध्यम से 'मागध' जी के प्रखर आलोचक व्यक्तित्व को सुधि समाज के समक्ष उजागर करना भी इस शोध विषय का उद्देश्य है । इसी उद्देश्य को सामने रखते हुए इस शोध विषय का चतुर्थ अध्याय प्रस्तुत किया गया है, जिसमें 'मागध' जी के आलोचक व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला गया है । आलोचना से तात्पर्य है सर्वांग निरीक्षण । साहित्य के क्षेत्र में

आलोचना से अभिप्राय है किसी साहित्यिक कृति का सांगोपांग निरीक्षण । आलोचक के विचार, चिंतन-मनन, आलोचक दृष्टि का प्रतिफलन उनकी लेखनियों के माध्यम से होता है । साहित्यकार के मर्म की अनुभूति ही आलोचना का उद्देश्य है । प्रो॰ कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध' जी भी ऐसे ही व्यक्तित्व के अधिकारी है, जिन्होंने असमिया आलोचना साहित्य को नई दिशा प्रदान की । आलोचना विषयक उनकी मान्यता है कि "समालोचना काव्य को सुबोध बनाकर प्रसादन के साथ-साथ प्रबोधन को भी आत्मसात कर लेती है ।"[४]

प्रो॰ कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध' प्रखर आलोचक व्यक्तित्व के अधिकारी है । उनकी समालोचना मूलतः गवेषणात्मक है । किसी भी कृति या कृतिकार की समालोचना करने के पूर्व वे उसका गहन अध्ययन, मनन और अनुशीलन करते तत्पश्चात अपना अभिमत व्यक्त करते थे । गौहाटी विश्वविद्यालय में रहते समय भी उनका यही व्यक्तित्व किसी भी विषय पर चर्चा करते वक्त झलक पड़ती थी । 'मागध' जी को अध्यापक, आलोचक, गवेषक, अनुवादक, संपादक, वक्ता, प्रशासक आदि रूपों में काफ़ी ख्याति मिली है ।

असमिया साहित्य के पाठकों और विद्वतजनों के लिए 'मागध' जी का नाम अपरिचित नहीं है । वे ऐसे हिंदी भाषी विद्वान है जिन्होंने हिंदी के साथ-साथ असमिया साहित्य विषयक आलोचनात्मक लेख लिखा है । उन्होंने मूलत: हिंदी में ही लिखा है परंतु असमिया, विशेषकर असमिया आलोचना के क्षेत्र में उनका योगदान द्रष्टव्य है । असमिया रामायणी साहित्य एवं असम में वैष्णव धर्म का प्रवर्तन करनेवाले शंकरदेव एवं माधवदेव के ऊपर उन्होंने जो आलोचनात्मक ग्रंथ लिखा है, वे उल्लेखनीय है । असमिया साहित्य से संबंधित अनेक लेख उन्होंने हिंदी और असमिया दोनों भाषाओ में लिखा हैं । इन लेखनियों ने असमिया साहित्य के पुरोधा व्यक्तियों को हिंदी साहित्य क्षेत्र में प्रतिष्ठित किया हैं ।

'मागध' जी द्वारा प्रणीत रचनाएँ मूलतः तीन प्रकार के हैं – हिंदी भाषा साहित्य विषयक, हिन्दू देवशास्त्र विषयक और असमिया साहित्य-संस्कृति विषयक आलोचनात्मक ग्रंथ ।

हिंदी भाषी साहित्यकारों में 'मागध' जी ऐसे व्यक्ति है, जिन्होंने मध्ययुगीन असमिया साहित्य के ऊपर विशेषज्ञता प्राप्त की है । असमिया समाज–संस्कृति विषयक आलोचनात्मक कृतियों के माध्यम से वैष्णव धर्म के प्रवर्तक शंकरदेव और माधवदेव एवं असमिया समाज व्यवस्था को राष्ट्रीय स्तर पर लाए और भारतीय साहित्य के वाङ्मय को समृद्ध किया । राम कथा पर आधारित कृतियों ने असम प्रांतीय कृतिकारों की परमार्थ चेतना, काव्य चेतना, समाज चेतना की वस्तुन्मुखी, सम्यक और प्रमाणिक विश्लेषण किया । 'मागध' जी ऐसे आलोचक है, जिन्होंने विवेच्य कृति या कृतिकार की अंतरात्मा में प्रविष्ट हो उसे विश्लेषित किया है । उनकी तटस्थता एवं उदारतापूर्ण विचारों ने असमिया आलोचना साहित्य को नया मान प्रदान किया।

'मागध' जी असम प्रांतीय राम काव्य के विशिष्ट अध्येता रहे है । वैष्णव मत के प्रवर्तक एवं प्रचारक शंकरदेव और माधवदेव के विशिष्ट आलोचक के रूप में उन्होंने प्रतिष्ठा प्राप्त की और असमिया साहित्य को राष्ट्रीय मंच पर प्रतिष्ठित किया है । 'मागध' जी के व्यक्तित्व के इन पक्षों को उजागर करते हुए प्रो॰ अनंत कुमार नाथ ने कहा है 'मागध' जी प्रतिष्ठित साहित्यिक एवं आलोचक होने के साथ ही कुशल और बड़े प्रभावोत्पादक वक्ता भी है । उनके लेखन और भाषण का विषय साहित्य होकर भी मूलतः भारतीय संस्कृति की व्याख्या करने से जुड़ा है । गुवाहाटी के उजान बाज़ार में उनके निवास पर संध्या समय नित्त्य जमनेवाली चौकड़ी (जिसमें धर्मदेव तिवारी, अजित कुमार दास, सुरेन्द्र महंत, जे॰ बी॰ त्रिपाठी तो सदा होते ही थे) में वे बहुधा कहा करते थे कि मेरे लेखन का अधिकांश मेरे अंतर्मन का रुदन है, रुदन है भारतवर्ष के नष्ट हो रहे गौरव का, भले ही वह लोगों को आलोचना ही लगे । भारतवर्ष, वैष्णव भक्ति साहित्य, रामकथा, आदि विषयक उनका लेखन पूरी तरह सोद्देश्य रहा है जिसके केंद्र में है मनुष्य ।"[9]

'मागध' जी के आलोचक व्यक्तित्व को समझने के लिए उनके द्वारा रचित पुस्तकों पर प्रकाश डालना आवश्यक है । हिंदी तथा असमिया दोनों भाषाओं में 'मागध' जी की आलोचनात्मक रचना उपलब्ध है । इन लेखनियों के माध्यम से ही उनका आलोचक रूप प्रस्फुटित हो उठा है । डॉ॰

'मागध' ने आलोचना शब्द पर विचार करते हुए कहा है कि आलोचना, समालोचना और समीक्षा तीनों समान अर्थ के द्योतक है । उन्होंने इसे सरल एवं सुबोध रूप में समझाते हुए स्पष्ट किया है कि समालोचना का अर्थ है 'प्रारम्भ से अंत तक सम्यक रूप से देखना (टाप+लुच+सम)' समीक्षा का भी यही अर्थ है – सम्यक रूप से देखना (आ+ईक्ष+सम)'सम्यक ईक्षणम' । साहित्यिक कृति की किसी भी विधा का अच्छी तरह से परीक्षण-विश्लेषण कर सम्मति प्रदान करने का कार्य समालोचना है । साहित्य की किसी भी विधा को देखना और परखना सामान्य कार्य नहीं है । फिर प्रत्येक ओर से सम्यक रूप में देखना तो मात्र प्रतिभाशाली व्यक्तियों का ही कार्य है । 'मागध' जी ऐसे ही प्रतिभाशाली आलोचक है ।

'मागध' जी द्वारा प्रणीत आलोचना सैद्धांतिक, व्याख्यात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक आदि प्रकारों के अंतर्गत आती है । डॉ॰ 'मागध' के अनुसार आलोचना के प्रकारों पर कई दृष्टियों से विचार किया जा सकता है, जिनमें दो प्रमुख हैं – आलोचक के दृष्टिकोण की दृष्टि से और उसकी शैली की दृष्टि से । शैली की दृष्टि से आलोचना का सबसे महत्त्वपूर्ण रूप है – प्रभाववादी आलोचना, जिसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आलोचना मानते ही नहीं थे । इसी प्रकार एक दूसरा रूप है, ऐतिहासिक या विकासवादी आलोचना का । इसमें ऐतिहासिक विकास की कड़ी के रूप में ही कृतियों का अध्ययन किया जाता है ।

'मागध' जी ने अपनी लेखनियों के माध्यम से हिंदी साहित्य एवं भाषा पर विस्तृत प्रकाश डाला है । हिंदी साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने जो रचनाएँ रची वह प्रमुखत : हिंदी साहित्य के इतिहास, भारतीय अलंकार परंपरा, वर्गीकरण, परिभाषा, महत्त्व, संघटना और आधुनिक कविताओं में अलंकारों का विधान, काव्य के स्वरूप, हेतु, तत्व, रस, रीति, हिंदी साहित्य के साहित्यकार, काव्यशास्त्र आदि पर आधारित है । साथ ही मगध क्षेत्र के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित करते हुए मगध क्षेत्र के मुख्य स्थानों पर भी पुस्तक लिखी है ।

हिन्दू देवता विषयक कई भ्रामक चिंतन-धारा अहिन्दु तथा विदेशी समाज में प्रचलित है । हिन्दू देवी-देवता एक प्राण तत्व है, इसे समझने और आत्मार्पित करने की क्षमता एवं देवता विषयक सारगर्भित, प्रतीक और मिथक आदि के बारे में अनजान होने के कारण ही अहिंदू और विदेशी इसे मात्र बहुदेवोपासना कह कर न केवल चलता कर देते है, वरन अनेक बार इसकी कुत्सा भी करते है । अंग्रेजी में लिखित अधिकांश पुस्तकों में पूर्वाग्रह एवं अटकलों के आधार पर अनेक बार मिथ्या और भ्रामक निष्कर्ष निकाले गए है । हिंदी ही नहीं, आधुनिक भारतीय भाषाओं में ऐसी पुस्तकों का प्राय: अभाव है जिनमें हिन्दू देवता से संबन्धित सही ढंग की आवश्यक जानकारी एकत्र रूप में प्राप्त हो सके । स्थिति की भयावहता और युवापीढ़ी की एतदविषयक अज्ञानता को ध्यान में रख कर ही हिंदी में इस अभाव की पूर्ति हेतु प्रो॰ कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध' ने अपने देवता को 'हिन्दू देवमाला' के रूप में स्मरण करने की परिकल्पना बनायी है । 'मागध' जी द्वारा रचित देवता विषयक कृतियों के माध्यम से उनके आलोचक व्यक्तित्व को उजागर करते हुए डॉ॰ धर्मदेव तिवारी जी ने उनके हिन्दू देवमाला विषयक रचनाओं के संदर्भ में कहा है "देवता विषयक हिन्दू चिंतनधारा की विशेषता 'एक सत प्रेम्णा बहुधा वदन्ती' है । परंतु इसे समझने और आत्मापिर्त करने की क्षमता एवं देवता विषयक सारगर्भिता, प्रतीक और मिथक आदि के बारे में अंजान होने के कारण ही अहिन्दु और विदेशी मात्र बहुदेवोपासना कह कर उसकी कुत्सा भी करते है । .....इस अभाव की एक सीमा तक पूर्ति करने हेतु 'मागध' जी ने अपने देवता का हिन्दू देवमाला के रूप में स्मरण करने की योजना बनायी है ।"[६]

'मागध' जी ऐसे हिंदी भाषी विद्वान है, जिन्होंने हिंदी के साथ-साथ असमिया साहित्य विषयक आलोचनात्मक लेख लिखा है । उन्होंने मूलतः हिंदी में ही लिखा है परंतु असमिया साहित्य विशेषकर आलोचना के क्षेत्र में उनका योगदान द्रष्टव्य है । असमिया रामायणी साहित्य एवं असम में वैष्णव धर्म का प्रवर्तन करनेवाले शंकरदेव एवं माधवदेव के ऊपर उन्होंने जो आलोचनात्मक ग्रंथ लिखे है, वे उल्लेखनीय हैं । असमिया साहित्य से संबन्धित अनेक लेख उन्होंने हिंदी और असमिया दोनों भाषाओ में लिखा हैं । असमिया आलोचनात्मक कृतियों के

माध्यम से वैष्णव धर्म के प्रवर्तक शंकरदेव और माधवदेव एवं असमिया समाज व्यवस्था को राष्ट्रीय स्तर पर लाए और भारतीय साहित्य के वाङ्मय को समृद्ध किया ।

आलोचक की योग्यता के बारे में उनकी विस्तृत और गहन अध्ययनशीलता के जरिए पता चलता है । सीमित अध्ययन से आलोचक आलोचना कार्य की संपदना भली-भांति नहीं कर सकता है । 'मागध' जी की अध्ययनशीलता उनकी आलोचनात्मक लेखन में प्राय: लक्षित होती है । उनकी आलोचना में सूत्रबद्ध टिप्पणियाँ मिलती है जो उनकी अध्ययनशीलता का द्योतक है । उदाहरण के लिए यहाँ कुछ एक टिप्पण असमिया साहित्य से संबन्धित आलोचनात्मक लेख से प्रस्तुत किया गया है । यथा-

(क) 'विभक्ति को समाप्त करना ही भक्ति है ।' शंकरदेव साहित्यकार और विचारक से उद्धृत, पृष्ठ ४६४.

(ख) शंकरदेव के लिए 'भक्ति सामाजिक संगठन का साधन थी, प्रेमोन्माद भावुकता नहीं, उनकी कल्पना स्पष्ट थी कि समाज की दो अवस्थाएँ ही संभव है- भक्त और विभक्त । विभक्ति धार्मिक हो या आध्यात्मिक, सामाजिक हो या सांस्कृतिक, आर्थिक हो या राजनीतिक – शांति, सुख, समृद्धि और विकास के लिए बाधक है ।' शंकरदेव साहित्यकार और विचारक से उद्धृत, पृष्ठ ४६४

(ग) 'शंकरदेव की कविता का वास्तविक महत्त्व मानव-मनोवेगों के आह्लादन में नहीं, अनुशासन में है ।' शंकरदेव साहित्यकार और विचारक से उद्धृत, पृष्ठ २४६.

(घ) 'माधवदेव के व्यक्तित्व की समग्रता उस प्रिज्म सी है जिसमें उनके कवि, भक्त और तत्वचिंतक का योग नहीं संयोग हुआ है ।' माधवदेव व्यक्तित्व और कृतित्व, पृष्ठ १४६

(ङ) 'माधवदेव का अनुकरण तो बहुतों ने किया, पर झुमुरा सदा अननुकरणीय ही रही है ।' माधवदेव व्यक्तित्व और कृतित्व, पृष्ठ ९३

(च) 'माधवदेव को असमिया का सूरदास कहा जाएगा ।' माधवदेव व्यक्तित्व और कृतित्व, पृष्ठ १३०

इन सूत्रबद्ध टिप्पणियों के जरिए हमें 'मागध' जी की पैनी आलोचक नज़र और अध्ययनशीलता के बारे में ज्ञात होने का मौका मिलता है ।

'मागध' जी आलोचक के रूप में काफ़ी महत्त्व रखते है । वे गवेषक आलोचक है । उन्होंने असमिया साहित्य की आलोचना करने के पूर्व असमिया भाषा सीखी तत्पश्चात असमिया साहित्य का गहन अध्ययन मनन किया फिर हिंदी के बृहद क्षेत्र में असम के महापुरुष शंकरदेव तथा माधवदेव और असमिया रामायणी साहित्य को प्रतिष्ठित किया । उन्होंने विवेचन-विश्लेषण के जरिए किसी कृति या कृतिकार की समालोचना की है ।

हिंदी आलोचना के क्षेत्र में 'मागध' जी ने सन 1964 में पद्माकर कृत 'पदमभारण' की विस्तृत भूमिका लिखकर प्रवेश किया । परंतु उन्हें ख्याति मिली असमिया आलोचक के रूप में । सन 1971 ई॰ में 'शंकरदेव के मूल्यांकन की समस्या' नामक आलेख लिख कर ही उन्होंने इस दिशा में प्रवेश किया । इस क्षेत्र में उनके प्रवेश की एक विशेष पृष्ठभूमि रही । सन 1970 ई॰ में 'मागध' जी ने गौहाटी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में संस्थापक अध्यापक के रूप में कार्यभार ग्रहण किया । तदुपरान्त असमिया साहित्य के अध्ययन-मनन की ओर उनका ध्यान गया । उन्हें श्रीमंत शंकरदेव, जो असम में वैष्णव धर्म के प्रवर्तक-प्रचारक थे उनके साहित्य को पढ़ने और समझने का मौका मिला । प्रारम्भिक अध्ययन से उन्हें लगा कि असम के विद्वान जहाँ शंकरदेव को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथा श्रेष्ठ महाकवि मानते है, वहीं उन्हें मात्र धर्मगुरु और धर्म प्रचारक के रूप में सीमित रखना चाहते है । शंकरदेव के साहित्य की इस विसंगति ने उनका ध्यान आकृष्ट किया और इसी विषय पर उन्होंने अपना पहला असमिया साहित्य विषयक आलोचनात्मक लेख हिंदी में लिखा । यह लेख 'शंकरदेव मूल्यांकन की समस्या' नाम से राष्ट्रवाणी पत्रिका में सन 1971 ई॰ में प्रकाशित हुआ । लेख हिंदी में होने के कारण हिंदी से अपरिचित असमिया विद्वानों

का ध्यान उस ओर नहीं गया परंतु इसी लेख को जब श्री बापचन्द महंत ने असमिया में 'शंकरदेवर मूल्यायनर समस्या' नाम से अनुवाद किया और सन 1972 ई॰ में 'नीलाचल' पत्रिका में प्रकाशित किया तब यह लेख चर्चित तो हुआ ही साथ ही 'मागध' जी की ओर भी लोगों का ध्यान गया । इस लेख से 'मागध' जी की पहचान बननी शुरू हुई । शंकरदेव के गीतकार रूप को व्याख्यायित करते हुए 'मागध' जी ने 'शंकरदेवर गीत-संगीत' नाम से एक आलेख लिखा जो सन 1972 ई॰ में आलोक के रंगाली बिहू अंक में प्रकाशित हुआ । शंकरदेव के गीतकार रूप के अनछुए पहलुओं को पाठकों के समक्ष उजागर कर 'मागध' जी ने अपने आलोचक-विवेचक रूप का परिचय दिया ।

असमिया साहित्य विषयक 'मागध' जी की आलोचना प्रमुखत: मध्यकाल यानी असमिया वैष्णव भक्तिकाव्य तक सीमित है । वे असमिया भक्तिकाव्य के मान्य विश्लेषक है । वे असमिया समाज के सर्वमान्य गुरुदेव श्रीमंत शंकरदेव और श्रीमंत माधवदेव के साहित्य के बहूचर्चित आलोचक-विश्लेषक के रूप में प्रख्यात है । इस दृष्टि से 'शंकरदेव साहित्यकार और विचारक' और 'माधवदेव व्यक्तित्व और कृतित्व' ग्रंथ अबतक मान्य बने हुए है । इनके अतिरिक्त असमिया रामायणी साहित्य को समग्र रूप में विश्लेषित करनेवाला 'असम प्रांतीय राम साहित्य' अपने विषय की अभी तक की एकमात्र महत्त्वपूर्ण हिंदी भाषा की कृति बनी हुई है । 'मागध' जी की असमिया साहित्यालोचक रूप की पहचान विशेष रूप से उनकी तीन प्रकार की आलोचनाओं को लेकर है- व्याख्यात्मक आलोचना, तुलनात्मक आलोचना और ऐतिहासिक आलोचना ।

ऐतिहासिक आलोचनात्मक लेखों में ऐतिहासिक विकासक्रम से विषय को प्रस्तुत करना उनका लक्ष्य रहा है । विश्लेषण की अपेक्षा विवरण के माध्यम से उन्होंने इन लेखों को लिखा है । 'असमिया साहित्य में हास्य रस'(1977), 'असमिया वाङमय के श्रेष्ठरत्न'(1982, विविधा), 'असमिया साहित्यत कृष्ण'(1985), 'असमिया भाषा और साहित्य'(1994), 'दि ओरिजिन एण्ड डेवेलपमेंट ऑफ वैष्णविज़्म इन असम' (व्याख्यान,1995) आदि उनके द्वारा रचित ऐतिहासिक

लेख हैं । 'असम प्रांतीय राम साहित्य' उनके द्वारा रचित ऐतिहासिक ग्रंथ है जिसमें असम प्रांत में रचित राम साहित्य की परमार्थ चेतना, काव्यरूप, कारबी रामायण, खामती रामायण, आदि पर विचार किया गया है ।

तुलनात्मक आलोचनात्मक लेखों में 'उमापति आरु शंकरदेवर पारिजात हरण'(1973), हिंदी और असमिया के 'मधुमालती' संज्ञक काव्य(1974), हिंदी और असमिया के मृगावती संज्ञक काव्य(1975), असमिया कृष्ण काव्य और 'सुरसागर'(1979), हिंदी तथा असमिया में भारतेन्दु कालीन नयी चेतना(1983), हिंदी और असमिया वैष्णव काव्य(व्याख्यान), हिंदी और असमिया 'राम काव्य'(व्याख्यान), हिंदी और असमिया 'कृष्ण काव्य'(व्याख्यान) प्रमुख हैं । उल्लेखित पहले लेख में 'मागध' जी ने 'उमापति कृत पारिजात हरण पर शंकरदेव की पारिजात हरण आधारित है', इस मत का खंडन किया । और इनमें जो साम्य से अधिक वैषम्य है उस पर आलोकपात किया । हिंदी और असमिया में रचित 'मधुमालती' और 'मृगावती' संग्यक प्रेमाख्यान काव्य के बारे में पहली बार अपनी तुलनात्मक आलेख में प्रकाश डालते हुए स्पष्ट किया कि असमिया में रचित 'मधुमालती' और 'मृगावती' संग्यक काव्य हिंदी में रचित 'मधुमालती' और 'मृगावती' पर ही आधारित है । केवल दोनों में दर्शन और विचारधारा का अंतर है । हिंदी रचना पर सूफी दर्शन का प्रभाव है क्यों कि कवि मुसलमान है और असमिया रचना में वैष्णव मत का प्रभाव है क्यों कि कवि असमिया वैष्णव भक्त है । पांचवे लेख में हिंदी और असमिया दोनों भाषाओं में रचित साहित्य में भारतेन्दु कालीन चेतना का प्रभाव, कारक तत्व, परिस्थिति, नवीन चेतना का विकास किस प्रकार पड़ा और उनमें क्या साम्य है उसपर विस्तृत आलोचना की गयी । उस काल में रचित साहित्य में अंचल विशेष की रीति-नीति और स्थानीय परिस्थिति का जो अंतर है उस पर प्रकाश डाला गया । 'मागध' जी द्वारा रचित यह लेख बड़े प्रभावी और महत्त्वपूर्ण है । उनकी तुलनात्मक आलोचना की सिद्धि किसी को श्रेष्ठ या हीन बनाने में नहीं है । उन्होंने गहन अध्ययन कर उनमें प्राप्त समानता और विषमता को तथ्यों के साथ

उभारा है । उनकी समानता और असमानता पर प्रकाश डालते हुए उनमें निहित कारणों को स्पष्ट करने की कोशिश की है ताकि निष्कर्ष स्वत: झलक उठे ।

सूरदास और शंकरदेव के कृष्ण भक्तिकाव्यों का तुलनात्मक अध्ययन 'मागध' जी का डी॰ लिट॰ शोध प्रबंध है । यह प्रबंध उनकी तुलनात्मक और गवेषणात्मक आलोचना की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृति है । इसमें असमिया वैष्णव कवि शंकरदेव और हिंदी साहित्य के महामणि सूरदास के कृष्ण भक्ति मूलक रचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है ।

संख्या तथा गुण की दृष्टि से 'मागध' जी द्वारा प्रणीत व्यावहारिक या व्याख्यात्मक आलोचना ही प्रथम ठहरती है । शंकरदेव साहित्यकार और विचारक(स्वरचित ग्रंथ), माधवदेव के व्यक्तित्व और कृतित्व(स्वरचित ग्रंथ), माधवदेव के नाटक (संपादित), शंकरदेव के नाटक (संपादित), संदेशरासक (अनूदित), श्रीमंत शंकरदेव ब्रजावली समग्र, महापुरुष माधवदेव: ब्रजावली समग्र, शंकरदेव मूल्यांकन की समस्या(1971, राष्ट्रवीणा), छावालर वाणी हेन अनुमानि, मनेहुईबा परितोष(1976, राष्ट्रसेवक), महेश्वर नेओग: ए क्रिटिक एण्ड लिटेररी हिस्टोरियन(डॉ॰ महेश्वर नेओग अभिनंदन ग्रंथ), दि भागवत कल्चर: मीन्स आफ़ पीस एण्ड हारमोनी(व्याख्यान), दि भक्ति मूवमेंट एण्ड एक्ल्ग्रेशन ऑफ दि सवालटर्न्स(व्याख्यान) आदि आते हैं । 'मागध' जी के आलोचक व्यक्तित्व को उजागर करते हुए तथा उनकी आलोचनात्मक कृति शंकरदेव साहित्यकार और विचारक तथा माधवदेव व्यक्तित्व और कृतित्व पर अभिमत व्यक्त करते हुए कई असमिया आलोचक एवं पंडितों ने अपने विचार हमारे समक्ष रखे हैं ।

शंकरदेव :साहित्यकार और विचारक इस ग्रंथ को लिखने के क्रम में 'मागध' जी का यह मानना था कि इसमें आलोचना और गवेषणा साथ-साथ चली । आलोचना को छोड़कर लेखक कब-कैसे गवेषणा में लग गये इसकी सुधि स्वयं लेखक को भी नहीं रही । इसलिए 'मागध' जी की आलोचना गवेषणात्मक या वैज्ञानिक आलोचना की कोटी में आती है, जो प्रणाली हिंदी में हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने अपनी आलोचना में अपनाई थी । डॉ॰ सत्येन्द्रनाथ शर्मा ने उनके

व्यावहारिक आलोचक रूप का परिचय देते हुए शंकरदेव : साहित्यकार और विचारक के आरंभिकी में कहा है कि आलोच्य ग्रंथ बहुत अध्ययन और गवेषणा का फल है । शंकरदेव के द्वारा रचित सभी ग्रंथों का अध्ययन करने के उपरांत उनके बारे जो भी आलोचनात्मक ग्रंथ रचे गये थे उन्हें परख कर 'मागध' जी स्वकीय सिद्धांत में उपनीत हुए है । इस ग्रंथ ने शंकरदेव की रचनावली को हर दिशा से समेटने का प्रयास किया है ।

'शंकरदेव साहित्यकार और विचारक' ग्रंथ में शंकरदेव के जीवन, उनकी साहित्यिक कृति, काव्यत्व, दर्शन तत्व, भक्ति धारा और सांस्कृतिक विचार, सामाजिक सुधार आदि पर 'मागध' जी ने जो गवेषणा और आलोचना की है उस पर विस्तृत समीक्षा करते हुए 'असम ट्रिब्यून' के संपादक सतीशचन्द्र काकती जी ने कहा है कि "There had been a good number of books in Assamese and English written by Assamese scholars, but there is no record to show that any worthwhile attempt were made earlier to bring out a well–written book on various aspects of Sri Shankardeva's life and work…… It would perhaps not be any exaggeration to say the book under review will start in motion the work of evaluating Sri Sri Shankardev. The author has taken a good deal of pains in discussing Sri Shankardev's life, his literary works, his poetic genius, philosophy, bhakticulture and his all embracing zeal for social reform in ten chapters ."[७]

'माधवदेव: व्यक्तित्व और कृतित्व' पुस्तक के 'एकदा' में ही 'मागध' जी को माधवदेव पर कहाँ से सूचना और सामग्री मिली ? उसका उल्लेख किया है । यह उनके अध्ययनशीलता और गवेषक रूप का परिचायक है । वैसे ही 'मागध' जी द्वारा रचित 'माधवदेव : व्यक्तित्व और कृतित्व' नामक ग्रंथ की विश्लेषण प्रक्रिया, आलोचना की गंभीरता, भाषा में पकढ़, गवेषक दृष्टि एवं अध्ययन पुष्टता, प्रामाणिक तथ्य आदि पर विस्तार से विश्लेषण करते हुए प्रो॰ भूपेंद्रनाथ रायचौधुरी ने अपना अभिमत व्यक्त करते हुए उल्लेख किया है कि "माधवदेव : व्यक्तित्व और कृतित्व शीर्षक ग्रंथ महापुरुष माधवदेव के विषय में रचित प्रथम तथ्यात्मक आलोचनामूलक ग्रंथ है । डॉ॰ 'मागध' की विश्लेषण प्रकिया की एक निजी विशेषता है । इसका प्रमाण प्रस्तुत ग्रंथ के

प्रत्येक पृष्ठ में प्रस्फुटित हो उठा है । तथ्य की प्रमाणिकता, वैज्ञानिक विश्लेषण प्रक्रिया, तात्विक आलोचना की गंभीरता, भाषा की प्रौढ़ता और गवेषणा की मौलिकता ग्रंथ को उच्चस्तरीय मर्यादा प्रदान करती है ।"[८]

डॉ॰ केशवानन्द देव गोस्वामी ने भी 'माधवदेव : व्यक्तित्व और कृतित्व' नामक पुस्तक की मौलिकता पर विचार किया है और माधवदेव पर रचित पहली आलोचनात्मक ग्रंथ होने का यश देकर कहा है कि "Really the book betrays your erudition and scholarship and to my knowledge, it is the only full critical work on the saint poet so far available in any language."[९]

इन रचनाओं के माध्यम से 'मागध' जी का आलोचक रूप उद्भाषित हुआ है और उनके इसी आलोचक व्यक्तित्व को उजागर करते हुए प्रो॰ अनंत कुमार नाथ ने कहा है "प्रो॰ 'मागध' के आलोचक रूप की सिद्धि इस तथ्य में निहित है कि वे विवेच्य कृति या कृतिकार की अंतरात्मा में प्रविष्ट हो उसे विश्लेषित-व्याख्यायित करते है । इस क्रम में उनकी दृष्टि किसी प्रांत या भाषा विशेष के साहित्य की अपेक्षा सम्पूर्ण भारत और भारतीय साहित्य पर टिकी रहती है । वे तटस्थता और उदारता पूर्वक विचारों को इस क्रम से उपस्थित करते चलते है कि निष्कर्ष स्वयं झलक उठते है ।"[१०]

निष्कर्षत: यह स्पष्ट होता है कि साहित्यकार के किसी भी साहित्यिक विधा रचने के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है । यह कारण या प्रेरणा स्रोत ही लेखक को अनुप्रेरित करती है लिखने के लिए । प्रस्तुत अध्याय में 'मागध' जी ने जो असमिया आलोचना विषयक साहित्यिक कृतियों की रचना हैं, उनके रचना के पीछे कौने से कारण निहित थे, उनपर प्रकाश डाला गया । साथ ही रचनाओं के रचने के पींछे जो प्रेरणा स्रोत रहे उन्हें उभारा है । 'मागध' जी का बचपन घरेलू परिवेश में बींता । उनके दादाजी का उनपर बड़ा प्रभाव था । बचपन में नटखट होने के उनके पितामह प्राय: उन्हें हिंदी महाभारत सुखसागर, प्रेमसागर आदि जोर-ज़ोर से पढ़ने के लिए देते ।

इस तरह बचपन में ही उनका झुकाव भक्ति साहित्य की ओर हुआ । किशोरावस्था में उन्होंने कई संगठनों द्वारा आयोजित 'गीता', 'रामायण' की परीक्षा उत्तीर्ण की । इन कारणों से उनका झुकाव भक्ति साहित्य की ओर हुआ । कार्यक्षेत्र के कारण 'मागध' जी का असम आना हुआ । उन्होंने गौहाटी विश्व विद्यालय के हिंदी विभाग में हिंदी विभाग के अध्यापक के रूप में कार्यभर संभाला । यहाँ आने के उपरांत कई असमिया विद्वानों से अनुप्रेरित होकर उन्होंने असमिया सीखी और असमिया साहित्य का अध्ययन करने लगे । भक्ति साहित्य की ओर उनका झुकाव पहले से ही था, अब असमिया भाषा साहित्य का अध्ययन कर उन्हें श्रीमंत शंकरदेव, श्री माधवदेव, असम प्रांत में रामायण पर आधारित रचना आदि को जानने का मौका मिला और उनके द्वारा रचित साहित्य का आस्वाद ले पाएँ । परंतु 'मागध' जी साहित्य के आस्वादन से ही संतुष्ट नहीं थे, उन्होंने इस क्षेत्र में लिखना भी प्रारम्भ किया । इस प्रकार उन्होंने श्रीमंत शंकरदेव, श्री माधवदेव, असमिया में रचित रामायण आदि पर आलोचनात्मक ग्रंथ एवं कई लेख लिखे और असमिया साहित्य को हिंदी साहित्य क्षेत्र में प्रतिष्ठित किया ।

अध्याय में 'मागध' जी के आलोचक व्यक्तिव पर विचार किया गया है । प्रो॰ 'मागध' प्रखर आलोचक व्यक्तित्व के अधिकारी है । उनकी आलोचनात्मक रचना पढ़ने से ही उनकी गवेषक आलोचक दृष्टि तथा उनके अध्ययन पुष्टता का पता चलता है । । उनकी समालोचना मूलतः गवेषणात्मक है । किसी भी कृति या कृतिकार की समालोचना करने के पूर्व वे उसका गहन अध्ययन, मनन और अनुशीलन करते तत्पश्चात अपना अभिमत व्यक्त करते थे । गौहाटी विश्वविद्यालय में रहते समय भी उनका यही व्यक्तित्व किसी भी विषय पर चर्चा करते वक्त झलक पड़ता था । 'मागध' जी को अध्यापक, आलोचक, गवेषक, अनुवादक, संपादक, वक्ता, प्रशासक आदि रूपों में काफ़ी ख्याति मिली है । वे असमिया वैष्णव और रामायणी साहित्य के विशिष्ट अध्येता रहे है इसलिए उनकी असमिया आलोचनात्मक रचना भी शंकरी, रामायणी साहित्य पर आधारित है ।

संदर्भ सूची और टिप्पणियाँ :

१. अलंकार विमर्श के प्रकाशक श्री केदार साथी के नाम डॉ॰ नगेंद्र के लिखे पोस्टकार्ड से उद्धृत । पोस्टकार्ड डॉ॰ 'मागध' के पास सुरक्षित है जिसकी ज़ेरोक्स प्रति परिशिष्ट में दी गयी है ।

२. प्रो॰ कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध', *शंकरदेव साहित्यकार और विचारक*, पृष्ठ संख्या छ

३. प्रो॰ कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध', '*शंकरदेव के मूल्याकंन की समस्या*' राष्ट्र वाणी, अक्टूवर 1971, पृष्ठ संख्या 29

४. 'मागध', डॉ॰ कृष्ण नारायण प्रसाद, *हिंदी साहित्य : युग और धारा*, भारती भवन, पटना, 1965, पृष्ठ संख्या 395

५. नाथ, अनंत कुमार,(सम्पा॰) *संस्कृति-साधक प्रो॰ कृष्णनारायण प्रसाद 'मागध' : व्यक्तित्व और कृतित्व*, अभिनंदन समारोह समिति, गौहाटी, 2003, पृष्ठ संख्या 129

६. नाथ, अनंत कुमार,(सम्पा॰) *संस्कृति-साधक प्रो॰ कृष्णनारायण प्रसाद 'मागध' : व्यक्तित्व और कृतित्व*, अभिनंदन समारोह समिति, गौहाटी, 2003, पृष्ठ संख्या 92

७. नाथ, अनंत कुमार,(सम्पा॰) *संस्कृति-साधक प्रो॰ कृष्णनारायण प्रसाद 'मागध' : व्यक्तित्व और कृतित्व*, अभिनंदन समारोह समिति, गौहाटी, 2003, पृष्ठ संख्या 125

८. आलोक, नवंबर, 1980

९. नाथ, अनंत कुमार,(सम्पा॰) *संस्कृति-साधक प्रो॰ कृष्णनारायण प्रसाद 'मागध' : व्यक्तित्व और कृतित्व*, अभिनंदन समारोह समिति, गौहाटी, 2003, पृष्ठ संख्या 125

१०. नाथ, अनंत कुमार,(सम्पा॰) *संस्कृति-साधक प्रो॰ कृष्णनारायण प्रसाद 'मागध' : व्यक्तित्व और कृतित्व*, अभिनंदन समारोह समिति, गौहाटी, 2003, पृष्ठ संख्या 130